स्वर्ण अक्षरों में अंकित होना चाहिये ...

डॉ. भारिल्ल द्वारा लिखित समयसार की ज्ञायकभाव प्रबोधिनी टीका को पढ़कर **डॉ. वि.धनकुमारजी जैन, प्राचार्य**-राजकीय संस्कृत विद्यालय गुराडियामान (झालावाड़-राज.) लिखते हैं ह्न

'स्वानुभव प्रमाण प्रदाता आचार्य कुन्दकुन्द तथा स्वरूप गुप्त आचार्य अमृतचन्द्र की अमृत आत्मख्याति की वाणी तथा आचार्य जयसेन की टीका में समाहित गाथाओं सहित समयसार की ज्ञायकभाव प्रबोधिनी नामक यह हिन्दी टीका अनेक विशेषताओं से युक्त सशक्त, सरल, सुबोधात्मक, सार्थक हिन्दी अनुशीलनात्मक कृति अद्यावधि तक प्रकाशन में नहीं आई थी; किन्तु इसे पाकर मैं धन्य हो गया हूँ।

निश्चित ही इसकी रचना अखिल विश्व के आत्मार्थी जैन बन्धुओं के लिये अहो भाग्य के मांगलिक अवसर का विषय होगा। यह टीका वास्तव में पंचमकाल की ऐसी आश्चर्यकारी ऐतिहासिक उपलब्धि है, जो भूतो न भविष्यति का अर्थ रखती है, इसे स्वर्ण अक्षरों में अंकित किया जाना चाहिये।

डॉ. भारिल्ल की यह टीका आचार्य कुन्दकुन्द के परमागमों का स्वाध्याय, पठन-पाठन, गहन चिन्तन-मनन का ही सुफल है। इसमें उनकी परम उत्कृष्ट भावना, जिनवाणी की सेवा करने की प्रबल प्रभावना व उत्सुकता स्वत: ही स्पष्ट होती है। इस टीका के माध्यम से आपने सम्पूर्ण विश्व के आध्यात्मिक समयसार पाठकों के लिये आत्महित का मार्ग प्रशस्तकर बहुत बड़ा उपकार किया है, जिसका मूल्य चुकाना असंभव है।

सामान्यरूप से अभी तक समाज में समयसार को स्वाध्याय के लिये बड़ा कठिन व अनुपयोगी समझा जाता था; किन्तु आपने उक्त विसंगत बात को उल्टा कर दिया है। यह टीका समयसार की विषयवस्तु, शैली व दृष्टि से आबाल-गोपाल सभी को बालबोध व छहढाला के समान समझने के लिये उपयोगी है। जिससे समयसार सबके लिये रुचिकर हो गया है।

इस टीका में ऐसा आनन्द अमृतरस भरा हुआ है कि जिसे नित्य प्रतिदिन रसास्वादन करके आत्मार्थी जन जीवन्त रहेंगे व तृप्त होंगे। इसमें बड़ाई जैसी कोई बात नहीं; किन्तु समाज को इस यथार्थ सत्य को नि:संकोच होकर स्वीकार करना चाहिये।

आपका यह प्रबल प्रयास पूज्य गुरुदेवश्री के विरह को भुलाने में काफी समर्थ है। अन्त में मैं यही आशा करता हूँ कि आप स्वस्थ रहते हुये प्रवचनसार व नियमसार ग्रन्थाधिराज की भी प्रबोधिनी टीका अवश्य लिखें। जो कि सबके हितार्थ होगा।'

वीतराग-विज्ञान

वीतराग-विज्ञान ही, तीन लोक में सार।
वीतराग-विज्ञान का , घर-घर होय प्रसार।।

वर्ष : 25 282 अंक : 6

प्रवचनसार पद्यानुवाद

शुभोपयोगप्रज्ञापनाधिकार

एकविध का बीज विध-विध भूमि के संयोग से।
विपरीत फल शुभभाव दे बस पात्र के संयोग से।।२५५।।
अज्ञानियों से मान्य व्रत-तप देव-गुरु-धर्मादि में।
रत जीव बाँधे पुण्यहीनरु मोक्ष पद को ना लहें।।२५६।।
जाना नहीं परमार्थ अर रत रहें विषय-कषाय में।
उपकार सेवादान दें तो जाय कुनर-कुदेव में।।२५७।।
शास्त्र में ऐसा कहा कि पाप विषय-कषाय हैं।
जो पुरुष उनमें लीन वे कल्याणकारक किसतरह।।२५८।।
समभाव धार्मिकजनों में निष्पाप अर गुणवान हैं।
सन्मार्गगामी वे श्रमण परमार्थ मग में मगन हैं।।२५९।।
शुद्ध अथवा शुभ सहित अर अशुभ से जो रहित हैं।
वे तार देते लोक उनकी भक्ति से पुणबंध हो।।२६०।।
जब दिखें मुनिराज पहले विनय से वर्तन करो।
भेद करना गुणों से पश्चात् यह उपदेश है।।२६१।।
गुणाधिक में खड़े होकर अंजलि को बाँधकर।
ग्रहण-पोषण-उपासन-सत्कार कर करना नमन।।२६२।।

ह्न डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

जगत तो इन्द्रजाल के समान है

पूज्यपाद आचार्य श्री देवनन्दि के प्रसिद्ध ग्रन्थ इष्टोपदेश के 39 वें श्लोक पर हुए आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के अध्यात्मरसगर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है। मूल श्लोक इसप्रकार है ह्न

निशामयति नि:शेषमिन्द्रजालोपम् जगत्।
स्पृह्यत्यात्मलाभाय गत्वान्यत्रानुतप्यते ।।

योगी समस्त जगत को इन्द्रजाल के समान समझते हुए आत्मस्वरूप की प्राप्ति की अभिलाषा करता है; किन्तु अन्य विषय (बाह्य परपदार्थों) में लग जाये तो पश्चात्ताप करता है।

(गतांक से आगे...)

धर्मी को परद्रव्य की उपेक्षा और स्वभाव की अपेक्षा है, तथापि अस्थिरतावश कदाचित् परपदार्थों के प्रति रागादि उत्पन्न हो तो उनसे दूर होकर वह पश्चात्ताप करता है।

वह विचार करता है कि अरे ! मुझे तो मेरा आत्मस्वभाव ही लाभरूप है, उसे छोड़कर मैं इन विकल्पों में कैसे आ गया ? मेरे अलावा अन्य समस्त जगत तो इन्द्रजाल के समान है, उसमें मैं किसे अपना मानूँ ? किसे छोड़ूँ ? और किसका नाश करूँ ? इत्यादि समस्त विकल्प मुझे दु:खरूप ही है ह्न ऐसा विचार करते हुए ज्ञानी पश्चात्ताप करता है।

परद्रव्य में किसीप्रकार का फेरफार कर सके ह्न ऐसी जीव की प्रभुता नहीं है तथा परद्रव्य कभी अपनी प्रभुता छोड़ता नहीं है। परमाणु भी ईश्वर है-जड़ेश्वर है, वह भी अपनी शक्ति से कार्य करता है, उसे अपना कार्य करने में अन्यद्रव्य की अपेक्षा नहीं है।

एक जड़ेश्वर है, एक विभावेश्वर है और एक स्वभावेश्वर है। परमाणु स्वतंत्ररूप से अपना कार्य करता है, अत: वह जड़ेश्वर है। मिथ्यादृष्टि स्वतंत्ररूप से विभाव का स्वामी बनता है। उसे कर्मादि विकार नहीं कराते, अपितु वह स्वयं स्वतंत्रपने अज्ञान से विकार करता है, इसलिए विभावेश्वर है और आत्मा विभाव और परद्रव्य से भिन्न ज्ञानानन्दस्वभावी है ह्न ऐसा जानकर जो ज्ञानी सहजात्मस्वरूप

रहता है वह स्वभावेश्वर है।

परद्रव्य और विभाव का स्वामी कहलानेवाला मूढ़ मिथ्यादृष्टि विभावेश्वर है, उन विभावभावों को जीव स्वयं छोड़े तो वे छूटेंगे। साक्षात् तीर्थंकर भगवान भी उन विभावभावों को नहीं छुड़ा सकते।

इस ३९ वीं गाथा में धर्मी जीव का लक्षण बताया गया। धर्मी जीव को समस्त जगत इन्द्रजालसम लगता है। एक निजात्मानुभव में ही उसकी निरन्तर रुचि है, अत: उसी की प्राप्ति के लिए निरन्तर प्रयत्नवत् रहता है। परद्रव्य-परभावों से उदास है, फिर भी कभी पर की ओर लक्ष्य जाए तो पश्चात्ताप करता है।

धर्मी जीव के उक्त लक्षण के अतिरिक्त अन्य और कौन-कौन से लक्षण हैं। उसे आगामी गाथा में कहते हैं ह्न

इच्छत्येकान्तसंवासं निर्जनं जनिताऽदर:।
निजकार्यवशात्किंचिदुक्त्वा विस्मरति द्रुतम्।। ४०।।

निर्जनता के लिए जिसको आदर उत्पन्न हुआ है ह्न ऐसा योगी एकान्तवास को चाहता है और निज कार्यवश कुछ बोल गया हो तो वह शीघ्र ही उसे भूल जाता है।

यह बात तो छोटे-छोटे बालकों को भी समझाने जैसी है। बालक भगवान है और बालकपना जड़ शरीर है, मिट्टी है। बालक, वृद्ध, स्त्री, पुरुष आदि समस्त आत्मायें सच्चिदानन्द परमात्मा हैं। किसी की आत्मा में किसीप्रकार का कोई फेरफार नहीं है।

निज आत्मा को पहिचानकर उसमें श्रद्धा करना और एकान्तस्थान में उसी आत्मा में एकाग्र होने का अभ्यास करना यही मनुष्यभव में करने योग्य कार्य है।

जहाँ मनुष्य और पशु आदि की आवाज भी न हो वह निर्जनस्थान कहलाता है ह्न ऐसे एकान्त स्थान में धर्मी निज-ज्ञानानन्द स्वरूप में एकाग्र होने का प्रयत्न करता है तथा किसी कारणवश वहाँ कोई विकल्पादिक आ जाए तो कुछ भी न बोलते हुए उसे तत्काल भूल जाते हैं।

स्त्री-पुत्र-धन आदि के लोभी स्वार्थवश मंत्र-तंत्रादि प्रयोग कराने के लिए न आ जावे इसलिए योगी एकान्तवास पसंद करते है। जिससे उनके समीप कोई मनुष्य आवे ही नहीं और वे अपने हित का कार्य शांतिपूर्वक कर सकें।

आत्मा को हितकारी ऐसा इष्टोपदेश यहाँ चल रहा है। जिसे अपनी आत्मा का हित करना है, उसे प्रथमत: अतीन्द्रिय आनन्दस्वरूप आत्मा को पहिचानकर, उसमें ही एकाग्र होकर परद्रव्य व परभावों की उपेक्षा करनी होगी।

आत्मा का श्रद्धा-ज्ञान और अनुभव कर लेने के पश्चात् धर्मी की दशा कैसी होती है ? उसकी विशिष्ट बात इस गाथा में कर रहे हैं।

जिसे एक निजात्मा की ही रुचि है ह्न ऐसे जघन्य सम्यग्दृष्टि को भी ऐसी भावना रहती है कि अपने आत्मानुभव की प्राप्ति के लिए ऐसा एकान्तस्थान हो जहाँ मैं समस्त बाह्य प्रवृत्तियों से दूर रहूँ। जहाँ लोग मंत्र-तंत्र-चमत्कारादि के सम्बन्ध में पूछने नहीं आवें।

लौकिकजन तो अपने स्वार्थवश पुत्र-प्राप्ति के लिए, धनप्राप्ति के लिए, अलाभ से बचने के लिए, मंत्र-तंत्रादि के लिए और जगत के अनेक प्रकार के प्रश्नों को पूछने के लिए धर्मात्मा के पास आते हैं। वे लौकिकजन इसप्रकार के प्रश्न लेकर नहीं आवें और निजात्मा का ध्यान एकान्तस्थान में निर्विघ्न कर सकें, इसलिए धर्मात्मा जीव स्वभाव से ही जनशून्य ऐसे पर्वतादि की गुफा-कंदरा आदि में अकेले अथवा गुरु के संग रहना चाहते हैं।

योगी को ध्यान-तपश्चरण आदि के द्वारा कदाचित् लोक-चमत्कारादि अतिशय प्रगट होवे; फिर भी वे उसमें अपना हित नहीं मानते। लोगों को उपदेश देने से मुझे हित होगा अथवा निर्जरा होगी ह्न ऐसा भी नहीं मानते; क्योंकि उपदेशस्वरूप वाणी तो जड़ है और उपदेश देने का विकल्प शुभभाव है। उससे अपना हित नहीं होता, मात्र पुण्य-बंध होता है, फिर भी उपदेशादि का विकल्प आवे तो वह अन्य बात है; किन्तु धर्मी जीव उसे हेय ही मानते हैं, उसमें उपादेयबुद्धि नहीं करते।

धर्मी जीव के ध्यान में कोई अतिशयादि उत्पन्न हुए हो तो वे किसी को बताते नहीं है और यदि कोई पूछे तो भी कहते नहीं है। स्व-स्वभाव की एकाग्रतापूर्वक आत्मा में जो शान्ति प्रगट होती है, उससे बढ़कर धर्मी के लिए कोई चमत्कार या अतिशयादि श्रेष्ठ नहीं होते।

अत: धर्मी कहते है कि हे जीवो ! तुम स्वयं अतीन्द्रिय आनन्द और ज्ञानस्वरूप प्रभु हो। उसकी सन्मुखता करो और विभाव से विमुख हो जाओ। **(क्रमश:)**

व्यर्थ क्लेश क्यों पाता है ?

परमपूज्य सर्वश्रेष्ठ दिगम्बराचार्य कुन्दकुन्द के प्रसिद्ध परमागम नियमसार के 29 वें श्लोक पर हुए आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के अध्यात्म-रसगर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है।

श्लोक मूलत: इसप्रकार है ह्न

(शार्दूलविक्रीड़ित)

नानानूननराधिविभवानाकर्ण्य चालोक्य च,
त्वं क्लिशनासि मुधात्र किं जड़मते पुण्यार्जितास्ते ननु।
तच्छक्तिर्जिननाथपादकमलद्वन्द्वार्चनायामियं,
भक्तिस्ते यदि विद्यते बहुविधा भोगा: स्युरेते त्वयि ।।29।।

नराधिपतियों के अनेकविध महावैभव को सुनकर तथा देखकर, हे जड़मति ! तू यहाँ व्यर्थ क्लेश क्यों पाता है ? वे वैभव वास्तव में पुण्य से प्राप्त होते हैं। उस पुण्योपार्जन की शक्ति जिननाथ के पादपद्मयुगल की पूजा में है। यदि तुझे इन पादपद्मयुगल की भक्ति हो तो वे बहुविध भोग तुझे स्वयमेव प्राप्त होंगे।

यहाँ विशेष वैराग्यपूर्वक निजस्वभाव की भावना करते हैं और वैभव की भावना करने योग्य नहीं है ह्न ऐसा समझते हैं। स्वयं महासन्त मुनि होने पर भी अपनी लघुता वर्णन करते हुए वे कहते हैं कि ' हे जड़मति ! वैभवों को सुनकर तू व्यर्थ क्लेश क्यों पाता है ?' अन्दर अस्थिरता होने पर वैभव की तरफ लक्ष्य गया और राग की तनिक वृत्ति उठी, वह वृत्ति ही जड़मति है ह्न इस अपेक्षा से यहाँ कहा है।

पैसा इत्यादि का वैभव तेरे वर्त्तमान पुरुषार्थ से नहीं मिलता, वह तो पूर्व-पुण्य से ही आता है, अत: उस वैभव की भावनारूप क्लेश को छोड़ ! वह वैभव तो वास्तव में पुण्य से मिलता है और वैसे पुण्य की प्राप्ति जिनेन्द्रदेव के चरणकमल की पूजा में है। साधकपने में चैतन्य के भानपूर्वक बीच में भगवान की भक्ति का शुभराग आता है।

हे नाथ ! मैं तो तुम्हारे चरण-युगल का पुजारी हूँ। राग की भक्ति करने वाला नहीं हूँ, पुण्य या वैभव की भावना करने वाला नहीं हूँ।

हे जीव ! यदि तुझे भगवान की भक्ति होगी तो पुण्य से सहज ही वैभव मिल जायेगा, तुझे मांगना नहीं पड़ेगा। साधक को बीच में शुभराग से ऐसा वैभव तो आप ही प्राप्त हो जाता है, उसका ज्ञान कराया है ह्न वैभव का लालच नहीं दिलाया है।

तीर्थंकर, चक्रवर्ती, बलदेव आदि पदवी का वैभव सम्यग्दृष्टि के ही होता है। सम्यग्दृष्टि के अतिरिक्त अन्य किसी को ऐसी पदवी का पुण्य नहीं होता। अत: हे मूढ़मति ! तू निज चैतन्य की भावना में ही रह, बाह्य वैभव की भावना मत कर !

स्वयं पंचमकाल के मुनि हैं, अभी स्वर्ग का भव मिलेगा और वहाँ से राजकुमार के रूप में अवतार होगा ह्न इसका ज्ञान कराया गया। राग मेरा स्वरूप नहीं है ह्न ऐसा भान है। राग का आदर नहीं; आदर तो चैतन्यस्वभाव का ही है।

मुनि को स्वर्ग के अतिरिक्त अन्य कोई गति नहीं होती। धर्मात्मा को हीन भाव होते ही नहीं। सम्यग्दर्शन के पश्चात् वैमानिक देवों में ही उत्पन्न होता है और वहाँ से भी महा उच्च कुल में ही अवतरित होता है। निकृष्ट गति अथवा नीच भव में सम्यग्दृष्टि का अवतार नहीं होता।

अत: ऐसा कहा है कि तू बाहर के वैभव की बात सुनकर उसकी भावना करके व्यर्थ क्लेश मत कर ! चैतन्य की भावना कर ! बीच में पुण्य बंधने पर बाह्य वैभव तो सहज ही मिल जायेगा।

अब आगामी गाथा कहते हैं ह्न

कत्ता भोत्ता आदा पोग्गलकम्मस्स होदि ववहारा।
कम्मजभावेणादा कत्ता भोत्ता दु णिच्छयदो ।।18।।

आत्मा व्यवहार से पुद्गल कर्म का कर्त्ता-भोक्ता है और आत्मा (अशुद्ध) निश्चयनय से कर्म जनित भावों का कर्त्ता भोक्ता है।

गाथा में ज्ञान कराने के लिये नयों से वर्णन किया है।

(1) आत्मा निकटवर्ती अनुपचरित असद्भूत व्यवहार नय से द्रव्यकर्म का कर्त्ता और उसके फलरूप सुख-दुख का भोक्ता है।

कर्म आत्मा के साथ एक ही क्षेत्र में हैं, इसीलिये वे निकटवर्ती हैं। समीप में

हैं, उतना सम्बन्ध है, इसलिये अनुपचरित है; किन्तु आत्मा के स्वभाव से वे कर्म भिन्न वस्तु हैं; अत: असद्भूत हैं। और उनके साथ निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध है, इस अपेक्षा से व्यवहार है। इसप्रकार निकटवर्ती अनुपचरित असद्भुत व्यवहारनय से आत्मा को द्रव्यकर्म का कर्त्ता कहा है। जब आत्मा राग-द्वेष करता है, तब उनका निमित्त पाकर कर्म बंधते हैं; अत: आत्मा ने उन कर्मों को किया ह्न ऐसा निकटवर्ती अनुपचरित असद्भूत व्यवहारनय से कहा है। वास्तव में कहीं आत्मा उनका कर्त्ता नहीं है। करने की अवस्था हुई, तब उसमें निमित्तरूप से जीव का विकार था। इतना निमित्त नैमित्तिक बतलाने के लिये यह व्यवहार कहा है। कर्म बंधता है तो उस समय जीव में भी उतना विकार है। ऐसा यह ज्ञान कराया है।

साधकजीव को बीच में राग भी है, इसीलिये उसको ऐसा नय लागू पड़ता है। यदि राग सर्वथा टल गया हो तो उसको यह नय लागू नहीं पड़ सकता। सम्यग्दृष्टि अपने राग और कर्म के निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध का ज्ञान करता है। इसलिये उसको ऐसा नय होता है।

आचार्य कुन्दकुन्ददेव ने स्वयं मूलसूत्र में आत्मा को पुद्गल कर्म का व्यवहार से कर्त्ता कहा है; क्योंकि आत्मा की पर्याय में कर्म के साथ उतना निमित्त/नैमित्तिक सम्बन्ध है; अत: कहा है कि आत्मा निकटवर्ती अनुपचरित असद्भूत व्यवहारनय से कर्म का कर्त्ता है और उसके फलरूप सुख-दुख का भोक्ता है। यहाँ सुख-दु:खरूप अन्दर के परिणाम की बात नहीं है; अपितु जड़कर्म के विपाक की बात है। स्वयं हर्ष/शोक के परिणाम करे। उनका भोगना तो अशुद्ध निश्चयनय से है और उनमें जो जड़ कर्म का उदय निमित्त है, उसका भोग कहना निकटवर्ती अनुपचरित असद्भूत व्यवहारनय से है।

बाहर के संयोग का कर्त्ता भोक्ता कहने की बात इस निकटवर्ती में नहीं लेना है; क्योंकि उसकी बात तो उपचरित असद्भूत व्यवहारनय में आयेगी। यहाँ तो निकटवर्ती अर्थात् एक ही क्षेत्र में रहनेवाले कर्म का कर्त्ता/भोक्ता आत्मा अनुपचरित असद्भूत व्यवहारनय से है। कर्म ने आत्मा को फल दिया यह कथन व्यवहार का है। दूर की सामग्री इस नय में नहीं लेना। **(क्रमश:)**

छहढाला प्रवचन

रे जीव ! सुन, यह तेरे दु:ख की कथा

एक श्वास में अठदस बार, जन्म्यो मर्यो भर्यो दु:खभार।
निकसि भूमि-जल-पावक भयो, पवन प्रत्येकवनस्पति थयो।।४।।

(सुप्रसिद्ध आध्यात्मिक विद्वान दौलतरामजीकृत छहढाला पर गुरुदेवश्री के प्रवचन पाठकों के लाभार्थ यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं।)

(गतांक से आगे ...)

भाई ! तूने अज्ञान से निजस्वरूप को भूलकर बहुत लम्बे काल तक अनंत दु:ख भोगे, उसका पूरा कथन वाणी में नहीं आ सकता। अनन्त गुणों से परिपूर्ण आत्मा को जिसने ढक दिया और जिसको ज्ञानादि का अनन्तवाँ भाग ही खुला रहा ह्न ऐसी निगोददशा के अनन्त दु:ख में जीव ने संसार का अनन्तकाल बिताया। एकेन्द्रिय पर्याय में ही लगातार असंख्य पुद्गल परावर्तन काल तक जन्म-मरण किया। यह उत्कृष्ट स्थिति ऐसे जीव की समझना कि जो त्रस होकर फिर एकेन्द्रिय हुये हों; अनादि के एकेन्द्रिय जीव के लिए यह बात लागू नहीं होती; अनादिकालीन एकेन्द्रियपर्याय में बादर या सूक्ष्म सभी भव आ जाते हैं। यदि अकेले सूक्ष्म-एकेन्द्रिय भवों में ही निरन्तर जन्म-मरण करता रहे तो उसका उत्कृष्टकाल असंख्यात लोकप्रमाण समय (असंख्यातकाल) है; अकेले बादर एकेन्द्रिय में जन्म-मरण करने का उत्कृष्टकाल असंख्यात उत्सर्पिणी-अवसर्पिणीकाल प्रमाण है। बादर एकेन्द्रिय में भी पृथ्वीकाय आदि प्रत्येक में रहने की उत्कृष्ट भवस्थिति ७० कोड़ाकोड़ी सागरोपम है। समुच्चयरूप से वनस्पतिकाय में रहने का काल असंख्यात पुद्गलपरावर्तन है; परन्तु अकेले निगोद में (साधारण वनस्पतिकाय में) ही जन्म-मरण करता रहे और बीच में अन्य भव धारण न करे तो ऐसे इतरनिगोद में रहने का उत्कृष्ट काल ढाई पुद्गलपरावर्तन है।

यह बात व्यवहारराशि के जीवों की है, उनसे अनन्तगुणे जीव तो ऐसे हैं जो अनादि से अब तक निगोद में ही जन्म-मरण करते रहते हैं, निगोद में से निकलकर दूसरी गति में अबतक आये ही नहीं। इसप्रकार बहुत दीर्घकाल तक जीव एकेन्द्रिय पर्याय में ही मिथ्यात्व के कारण महान दु:खी हुआ। उसमें से निकलकर त्रसपर्याय पाना दुर्लभ है। त्रसपर्याय में पर्याप्त अवस्थारूप रहने का उत्कृष्टकाल दो हजार

सागरोपम है और त्रसपने में भी मनुष्य-पर्याय का मिलना बहुत कठिन है; उसमें सम्यग्दर्शनादि बोधि की एवं मुनिदशा की दुर्लभता का तो क्या कहना? ह्न

मनुष होना मुश्किल है, साधु कहाँ से होय?
साधु हुआ सो सिद्ध हुआ, करनी रही न कोय।

अरे ! मनुष्यपने की इतनी दुर्लभता है। ऐसा मनुष्यपना तुझे सहज मिल गया है, अत: अब चार गति के दु:खों से छूटने हेतु बोधिभावना भा ! क्योंकि ह्न

मिथ्यात्व-आदिक भाव को चिरकाल भाया है तूने।
सम्यक्त्व-आदिक भाव रे ! भाया कभी नहीं है तूने। (नियमसार गा.९०)

जीवों ने अज्ञान से राग की भावना भायी है, परन्तु रत्नत्रय धर्म की भावना कभी नहीं भायी। भावना का अर्थ है परिणमन। इस जीव ने अनादिकाल से राग में तन्मय होकर परिणमन किया; परन्तु राग से भिन्न सम्यग्दर्शनादिरूप परिणमन कभी नहीं किया; इसकारण संसार में रुल रहा है। सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र की प्राप्ति और मिथ्यात्वादि का त्याग ह्न ऐसी दशा अतिदुर्लभ है; उसके बिना अनन्त जीव निगोद के दु:खसागर में पड़े हैं। उन जीवों में से अनंतवें भाग जीव ही निगोद से बाहर आ पाते हैं। एक ओर निगोद के अतिरिक्त अन्य सब जीव और दूसरी ओर निगोद के जीव। इसतरह जब भी देखो, तब निगोद के जीव अन्य जीवों से अनन्तगुणे ही रहेंगे। उस निगोद से निकलकर पृथ्वीकाय आदि में आना भी दुर्लभ है, तो फिर मनुष्यपने की दुर्लभता का क्या कहना ?

अनन्तकाल में कोई जीव निगोद से निकलकर पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु या प्रत्येक वनस्पति में आता है तो वहाँ भी सम्यग्दर्शन के बिना महादु:ख पाता है। ऐसा कोई नियम नहीं कि निगोद से निकलनेवाला जीव अनुक्रम से पृथ्वी-जल आदि में ही आवे; कोई जीव वहाँ से निकलकर सीधा मनुष्य भी हो सकता है। बादर पृथ्वीकाय, बादर जलकाय-अग्निकाय-वायुकाय तथा प्रत्येक वनस्पतिकाय - प्रत्येक में रहने की उत्कृष्ट भव स्थिति ७० कोड़ाकोड़ी सागर की है; जिसमें असंख्य भव हो जाते हैं और उसमें पर्याप्त या अपर्याप्त दोनों प्रकार के भव आ जाते हैं। यदि अकेले पर्याप्त की अपेक्षा से कहा जाये तो उसमें प्रत्येक में रहने का उत्कृष्टकाल संख्यात हजार वर्ष है। एक ही तरह के भवों में लगातार जन्म-मरण करते रहने की जितनी कालमर्यादा हो, उसको '**भवस्थिति**' कहते हैं। विकलेन्द्रिय में रहने का उत्कृष्टकाल संख्यात हजार वर्ष है। पंचेन्द्रिपने में रहने का काल कुछ अधिक हजार सागरोपम है। त्रसपने में रहने का उत्कृष्ट काल साधिक दो हजार सागरोपम है। ऐसा त्रसपना पाकर भी जो जीव

आत्मा की समझ नहीं करेगा, वह त्रसस्थिति का काल पूरा होने पर फिर स्थावर/एकेन्द्रिय में चला जायेगा। त्रसपर्याय का जो काल दो हजार सागरोपम कहा है, वह तो उत्कृष्टकाल है, सभी जीव इतने काल तक त्रसपर्याय में नहीं रहते। बहुत से जीव तो अल्प काल में ही त्रसपर्याय पूर्ण करके फिर एकेन्द्रिय में चले जाते हैं और कोई विरले जीव आत्मा की पहचान करके, आराधना करके त्रसपर्याय को छेदकर मोक्षदशा की प्राप्ति कर लेते हैं। त्रसपर्याय की दो हजार सागर की उत्कृष्ट स्थिति भोगनेवाले जीव तो थोड़े ही होते हैं।

प्रश्न :ह्न एक सागरोपम में कितना काल होता है?

उत्तर :ह्न एक सागरोपम में असंख्य वर्ष होते हैं। इसका प्रमाण इसप्रकार है ह्न एक योजन की गहराई और उतना ही व्यासवाला गोलाकार गड्ढा हो। वह तत्काल के जन्मे मेंढ़े के कोमल बाल के टुकड़ों से (इतने छोटे टुकड़े कि जिनके दो भाग न हो सकें) ठसाठस भरा हो; प्रत्येक सौ वर्षों के बाद उनमें से एक टुकड़ा बाहर निकाला जाये; इसप्रकार करते-करते पूरा गड्ढा खाली होने में जितना समय लगे, उतने समय को एक 'व्यवहारपल्य' कहते हैं। गड्ढे की उपमा देकर नाप किया, इसकारण उसे 'पल्योपम' कहते हैं। गड्ढा अर्थात् पल्य। उसकी जिसे उपमा हो, वह पल्योपम है। ऐसे असंख्य व्यवहारपल्य का एक उद्धारपल्य तथा असंख्य उद्धारपल्य का एक अद्धापल्य; ऐसे दस कोड़ाकोड़ी (करोड गुणा करोड) अद्धापल्य का एक सागरोपम होता है।

पृथ्वीकायिक जीवों में उत्कृष्ट आयुस्थिति २२००० वर्ष; जलकायिक जीवों में उत्कृष्ट आयुस्थिति ७००० वर्ष; अग्निकायिक जीवों में उत्कृष्ट आयुस्थिति ३ दिन-रात; वायुकायिक जीवों में उत्कृष्ट आयुस्थिति ३००० वर्ष; इन चारों में बादरकाय की उत्कृष्ट भवस्थिति ७० कोड़ाकोड़ी सागरोपम है। प्रत्येक वनस्पतिकायिक जीवों में उत्कृष्ट आयुस्थिति १०,००० वर्ष की है और उनमें से प्रत्येक में पर्याप्तरूप से रहने का उत्कृष्टकाल (भवस्थिति) संख्यात हजार वर्ष है अर्थात् इतने कालतक उसी में जन्म-मरण हुआ करता है।

साधारण वनस्पति अर्थात् निगोद की आयु अन्तर्मुहूर्त ही है; उसमें रहने का उत्कृष्टकाल (इतरनिगोद का) ढाई पुद्गल परावर्तन है; परन्तु उसमें पर्याप्तदशा का भव लगातार किया करे तो भी अधिक से अधिक अन्तर्मुहूर्त तक ही करते हैं। पर्याप्त एवं अपर्याप्त दोनों मिलकर के ढाई-पुद्गल-परावर्तन जितना अनन्तकाल उत्कृष्टरूप से होता है। कोई जीव उससे कम समय में भी निगोद में से बाहर आ जाता है। **(क्रमश:)**

ज्ञान गोष्ठी

सायंकालीन तत्त्वचर्चा के समय विभिन्न मुमुक्षुओं द्वारा
पूज्य स्वामीजी से पूछे गये प्रश्न और स्वामीजी द्वारा दिये गये उत्तर

प्रश्न : अज्ञानी के व्रतादि तो बन्ध के कारण हैं, किन्तु ज्ञानी के व्रतादि तो मोक्ष के कारण हैं न ?

उत्तर : ज्ञानी हो अथवा अज्ञानी, किन्तु व्रतादि का शुभराग दोनों को ही बन्ध का कारण है, मोक्ष का नहीं; क्योंकि वह पर के आश्रय से होनेवाला भाव है। ज्ञानी को जो व्रतादि शुभराग आता है, उसमें भी आकुलता है, उद्वेग है; इसलिए बन्ध का कारण है। स्वसन्मुख होने पर जो शुद्ध परिणाम हुआ, वही मोक्ष का कारण है।

प्रश्न : आत्मानुभव होने से प्रथम ही शुभराग को हेय मानना उचित है क्या ?

उत्तर : आत्मा का अनुभव होने से पहले भी मुझे शुभराग हेय है ह्न ऐसा निर्णय करना चाहिए। सम्यक्त्व होने से पहले भी श्रद्धान में शुभराग का निषेध आना चाहिए। स्वरूप में स्थिरता होने पर ही शुभराग छूटता है; परन्तु उसका निषेध तो पहले ही होना चाहिए। यदि शुभराग का आदर किया जायेगा तो मिथ्यात्व दृढ़ होगा। शुभराग को हेय जानने का प्रयोजन अशुभ में जाने का नहीं है।

प्रश्न : सम्यग्दर्शन के बिना क्या व्रत-तप-दान-शीलादि अफल (व्यर्थ) हैं ?

उत्तर : हाँ, सम्यग्दर्शन के बिना किये जानेवाले समस्त व्रतादि-दानादि मुक्ति के लिए निष्फल हैं, संसारवृद्धि के लिए सफल हैं।

प्रश्न : व्रत-शील-तपादि के शुभराग को अत्यन्त स्थूल परिणाम क्यों कहा ?

उत्तर : आत्मस्वभाव सूक्ष्म और इन्द्रियों से अगोचर है, इसलिए अत्यन्त सूक्ष्म है। शुभ परिणाम आत्मस्वभाव से विरुद्ध जाति का है, अत: उसको अत्यन्त स्थूल परिणाम कहा है। राग का परिणाम परलक्ष्य से उत्पन्न होनेवाला विकृत परिणाम है, पराश्रयजन्य परिणाम है, स्थूल लक्ष्य वाला परिणाम है; इसलिए उसे अत्यन्त स्थूल परिणाम कहा गया है।

'ध्रुवधाम' में पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव सम्पन्न

बांसवाड़ा (राज.) : यहाँ श्री ज्ञायक पारमार्थिक ट्रस्ट (रजि.) द्वारा संस्थापित नवनिर्मित रत्नत्रय तीर्थ 'ध्रुवधाम' में श्री पंचबालयति दिग. जिनमन्दिर, श्री समवशरण जिनमंदिर एवं भगवान महावीरस्वामी मानस्तंभ हेतु दिनांक ३० नवम्बर से ०६ दिसम्बर, २००६ तक श्री नेमिनाथ दिग. जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव अनेक मांगलिक कार्यक्रमों पूर्वक सानन्द सम्पन्न हुआ।

महोत्सव में देश-विदेश के ख्यातिप्राप्त तार्किक विद्वान **डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल** के पंचकल्याणक प्रतिष्ठा पर प्रासंगिक प्रवचनों के अतिरिक्त डॉ. उत्तमचन्दजी सिवनी, पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल, पण्डित राजेन्द्रकुमारजी जबलपुर आदि के प्रवचनों का लाभ मिला।

सम्पूर्ण प्रतिष्ठा-विधि प्रतिष्ठाचार्य बाल ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री सनावद द्वारा सह-प्रतिष्ठाचार्य ब्र.धन्यकुमारजी बेलोकर, पण्डित मधुकरजी जलगाँव, पण्डित ऋषभजी शास्त्री छिन्दवाड़ा, पण्डित राजकुमारजी शास्त्री बांसवाड़ा, पण्डित अजितजी शास्त्री अलवर, पण्डित मनीषजी शास्त्री पिड़ावा, पण्डित सुबोधजी शास्त्री शाहगढ़, पण्डित संदीपजी शास्त्री छतरपुर, पण्डित सुनीलजी धवल भोपाल, पण्डित सुकुमालजी झांझरी उज्जैन, पण्डित बाबूलालजी बांझल गुना के सहयोग से सम्पन्न हुई।

महोत्सव में नेमिकुमार के माता-पिता बनने का सौभाग्य श्रीमती निर्मला-महीपालजी ज्ञायक बांसवाड़ा को मिला। सौधर्म इन्द्र-इन्द्राणी श्री धनपाल-कैलाश ज्ञायक थे। कुबेर इन्द्र-इन्द्राणी श्री वीरेन्द्र-सीमा ज्ञायक थे। सम्पूर्ण महोत्सव यज्ञनायक श्री नरेश एस.-किरण जैन के करकमलों से सम्पन्न हुआ। महाराजा उग्रसेन श्री सुभाषचन्द जैन एवं महारानी श्रीमती जैनमती जैन दिल्ली थीं।

प्रतिदिन सीमंधर संगीत सरिता छिन्दवाड़ा के प्रासंगिक गीत तथा रात्रि में आचार्य अकलंक देव न्याय महाविद्यालय के छात्रों तथा महिला मण्डल दाहोद द्वारा सांस्कृतिक कार्यक्रमों का मंचन हुआ।

विद्वत्सम्मान ह्न गर्भ कल्याणक के दिन डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल चेरिटेबल ट्रस्ट द्वारा जैन दर्शन के प्रचार-प्रसार हेतु किये गये विशिष्ट कार्यों के लिये **पण्डित राजकुमारजी शास्त्री बाँसवाड़ा** का सम्मान किया गया। उन्हें प्रशस्ति, शॉल एवं दस हजार रुपये की मानधन राशि से पुरस्कृत किया।

सभा में ट्रस्ट के अध्यक्ष पण्डित रतनचंदजी भारिल्ल, डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल, ब्र. जतीशचंदजी शास्त्री, पण्डित उत्तमचन्दजी, पण्डित राजेन्द्रकुमारजी, पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री, श्री बसन्तभाई दोशी, श्री महीपाल ज्ञायक, श्री बीनूभाई, श्री कान्तिभाई मोटाणी, श्री रमेशभाई मंगलजी मेहता, श्री राजेन्द्र बंसल मंचासीन थे। संचालन ट्रस्ट के महामंत्री पण्डित परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल ने किया।

संस्थाओं का सम्मान ह्न दीक्षा कल्याणक के प्रसंग पर श्री ज्ञायक पारमार्थिक ट्रस्ट, बाँसवाड़ा ने गुरुदेवश्री कानजीस्वामी द्वारा उद्घाटित तत्त्वज्ञान के प्रचार-प्रसार में राष्ट्रीयस्तर पर अपना अमूल्य योगदान देनेवाली मुमुक्षु समाज की प्रतिनिधि संस्थाओं का अभिनन्दन किया। इस अवसर पर राजस्थान सरकार के **गृहमंत्री माननीय श्री गुलाबचन्दजी कटारिया** की गौरवमयी उपस्थिति उल्लेखनीय रही।

महोत्सव में पूरे देश से हजारों मुमुक्षु पधारे। इस अवसर पर पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट से ८१ हजार ५२७ रुपये का साहित्य एवं २१ हजार १२५ घण्टों के सी.डी व ऑडियो कैसिट्स बिके। ●

बाँसवाड़ा में हुआ विद्वत् सम्मेलन

श्री अखिल भा. दि. जैन विद्वत्परिषद् का राष्ट्रीय सम्मेलन बाँसवाड़ा में पंचकल्याणक के मध्य **4 दिसम्बर,06** को आयोजित किया गया, जिसकी अध्यक्षता डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल ने की।

इस प्रसंग पर डॉ. राजेन्द्रजी बंसल अमलाई, पण्डित परमात्मप्रकाशजी भारिल्ल मुम्बई, पण्डित उत्तमचन्दजी जैन सिवनी, पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली ने अपने विचार व्यक्त किये।

इस अवसर पर पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल, डॉ. बी.एल.सेठी झुंझुनू, विदुषी श्रीमती विद्यावती जैन गनोड़ा, पण्डित राजकुमारजी शास्त्री बाँसवाड़ा आदि अनेक विद्वत्गण मंचासीन थे।

डॉ. भारिल्ल ने अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में विद्वानों को सामाजिक एकता-अखण्डता को कायम रखते हुये भ. महावीर द्वारा प्रतिपादित वीतरागी तत्त्वज्ञान का प्रचार-प्रसार करने हेतु मार्गदर्शन दिया। मंगलाचरण पण्डित संजीवकुमार गोधा एवं संचालन प्रचार-मंत्री श्री अखिल बंसल ने किया।

जैन पत्र सम्पादक संघ का गठन

दिल्ली : मीडिया के प्रभावी युग में जैन पत्रकारिता को नई दिशा प्रदान करने के पावन उद्देश्य से 2 अक्टूबर को विजयादशमी पर्व के अवसर पर अ.भा. जैन पत्र सम्पादक संघ का गठन किया गया। जैन पत्र सम्पादक संघ के संयोजक अखिल बंसल ने सभी जैन पत्रों के सम्पादकों को संघ से जुड़ने का आह्वान किया। शीघ्र ही संघ राष्ट्रीय स्तर पर सभी सम्पादकों का सम्मेलन आयोजित कर भावी भूमिका की दिशा निर्धारित करेगा। संघ के विस्तार व उसे सार्थक बनाने हेतु सम्पादक महानुभावों के सुझाव सादर आमंत्रित हैं। ह्न **अखिल बंसल** संयोजक, अ.भा. जैन पत्र सम्पादक संघ, 129 जादोन नगर 'बी' दुर्गापुरा, जयपुर -18, मोबाईल : 09314515197

छहढाला शिक्षण-शिविर सम्पन्न

दिल्ली : श्री अखिल भा. दि.जैन विद्वत्परिषद् (पंजीकृत) के तत्त्वावधान में सूरजमल-विहार जैन समाज दिल्ली में छहढाला शिक्षण-शिविर 10 से 19 नवम्बर, 06 तक सानन्द सम्पन्न हुआ।

दिनांक 13 से 19 नवम्बर तक विद्वत्परिषद् के राष्ट्रीय अध्यक्ष डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल के प्रतिदिन सायंकाल छहढाला पर सारगर्भित विशेष व्याख्यान हुए। छहढाला की सायंकालीन नियमित कक्षा डॉ. अशोक जैन शास्त्री द्वारा एवं प्रातः व अपरान्ह की कक्षा ब्र. कल्पना बेन द्वारा ली गईं।

प्रारंभ में डॉ. जयकुमार जैन मुजफ्फरनगर, डॉ. सुरेशचंद जैन दिल्ली, डॉ. वीरसागर जैन दिल्ली एवं पं. राकेश शास्त्री लोनी के तलस्पर्शी व्याख्यानों से समाज में विशेष धर्म प्रभावना हुई।

इस प्रसंग पर दिल्ली के प्रमुख जिनालयों में डॉ. भारिल्ल कृत समयसार की ज्ञायकभाव प्रबोधनी हिन्दी टीका की 100 प्रतियाँ श्री विमलजी नीरू केमिकल्स, दिल्ली की ओर से भेंट की गईं।

शिविर में विद्वत्परिषद् के सदस्य प्रा. कुन्दनलाल जैन, डॉ. गुलाबचन्द जैन, डॉ. जयकुमार उपाध्ये, डॉ. सत्यप्रकाश जैन, पं. शीलचन्द जैन, पं. जयन्तिलाल जैन, श्री सतीश जैन (आकाशवाणी), श्री अजितप्रसाद जैन, श्री वीरसेन जैन, श्री आनन्दप्रकाश जैन, श्री आदीश जैन, श्री अखिल बंसल, पं. सोहनपालजी, पं. जयपालजी, श्रीमती ममता जैन, श्रीमती बिन्दु जैन आदि की उपस्थिति रही।

इंदिरा गाँधी प्रियदर्शिनी पुरस्कार से सम्मानित

सुप्रसिद्ध विद्वान पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल के पुत्र युवाउद्यमी **श्री शुद्धात्मप्रकाश भारिल्ल,** जयपुर को इन्दिरा गाँधी प्रियदर्शिनी पुरस्कार, 06 से सम्मानित किया गया।

होटल ली मेरिडियन, नई दिल्ली में दिनांक 18.11.2006 को आयोजित भव्य समारोह में पूर्व राज्यपाल भीष्म नारायण सिंह, पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त जी.वी.जी. कृष्णमूर्ति, वेलजियम के राष्ट्रदूत पेट्रिक वेक्टर, तंजानिया की राजदूत ईरालिया नजारो सहित अनेक गणमान्य व्यक्तियों की उपस्थिति में केन्द्रीय मंत्री श्री पी.आई. किंदिया ने इन्हें यह पुरस्कार प्रदान किया।

इससे पूर्व यह पुरस्कार मदर टेरेसा जैसी विश्वप्रसिद्ध अनेक हस्तियों को मिल चुका है।

श्री भारिल्ल अपने करीब 30 हजार व्यावसायिक सहयोगियों के साथ देश भर में स्वतंत्र उद्यमिता एवं नैतिक जागरण के लिए कार्यरत हैं। उन्होंने अब तक करीब दस हजार परिवारों में आर्थिक स्वतंत्रता के लिए प्रेरणा का कार्य किया है। अपने इस अभियान में उनके देश भर में करीब 500 सेमिनार हो चुके हैं, जिनमें लगभग 4 लाख लोग भाग ले चुके हैं। विभिन्न संगठनों की ओर से उनके लगभग एक दर्जन टेप और सी.डी. भी जारी हो चुके हैं, जिन्हें लाखों लोगों ने सुना/देखा है।

इसके अतिरिक्त वे अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन के राष्ट्रीय मंत्री एवं पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट जयपुर के सहमंत्री के रूप में भी समाज सेवाएँ दे रहे हैं।

चाह समयसार की

डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल की बहुचर्चित कृति **समयसार का सार** का क्रांतिकारी संत मुनिश्री तरुणसागरजी महाराज के बैंगलोर चार्तुमास के मध्य उन्हीं के संघ में विराजित **क्षुल्लक श्री प्रयत्नसागरजी** ने जब आद्योपान्त अध्ययन किया तो इस कृति से अत्यधिक प्रभावित होकर उन्होंने ग्रन्थाधिराज समयसार परमागम का सूक्ष्मता से अध्ययन करने की भावना व्यक्त की।

क्षुल्लकजी की भावनानुसार श्री टोडरमल दि. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय जयपुर के स्नातक **पण्डित अनिलजी आलमान** हेरले को समयसार ग्रन्थ पढाने हेतु बुलाया गया।

दिनांक 16 सितम्बर से 16 अक्टूबर, 06 तक पण्डित अनिलजी आलमान ने समयसार के पूर्वरंग की 15 गाथाओं का सूक्ष्मता से अध्यापन किया। चातुर्मास समापन की ओर होने से यह क्रम आगे नहीं बढ सका; तथापि क्षुल्लक श्री प्रयत्नसागरजी ने भावना व्यक्त की कि अवसर मिलने पर टोडरमल महाविद्यालय से पढ़े विद्वानों के सान्निध्य में ही समयसार का अध्ययन करेंगे।

इस मंगल कार्य के होने में ब्र. यशपालजी की प्रेरणा तथा श्री आदिनाथ दि. जैन मंदिर बैंगलोर के संस्थापक श्री भबूतमलजी भण्डारी के सुपुत्र श्री रमेशजी भण्डरी व चम्पालालजी भण्डारी का सक्रिय सहयोग प्राप्त हुआ।

पंचकल्याणक वार्षिकोत्सव सम्पन्न

किशनगढ़ (राज.) : यहाँ हमीर कॉलोनी स्थित श्री महावीरस्वामी दिगम्बर जैन मंदिर में पंचकल्याणक की प्रथम वर्षगांठ पर दि. 20 एवं 21 नवम्बर,06 को वार्षिकोत्सव मनाया गया।

दिनांक 20 नवम्बर को सायंकाल जिनेन्द्र भक्ति, बाल ब्र.जतीशचन्दजी शास्त्री के प्रवचन एवं वीर संगीत मण्डली किशनगढ़ द्वारा भक्ति संगीत का आयोजन हुआ। 21 नवम्बर को प्रात: कलश शोभायात्रा के उपरान्त मंदिर पर श्री निहालचन्दजी ओसवाल द्वारा ध्वजारोहण किया गया।

इस अवसर पर श्री भागचन्दजी प्रदीपकुमारजी चौधरी परिवार की ओर से रत्नत्रय मण्डल विधान का आयोजन तथा जिनप्रतिमाओं का महा-अभिषेक एवं शिखर पर ध्वजा परिवर्तन हुआ। दोपहर में ब्र.जतीशचन्दजी शास्त्री का मार्मिक प्रवचन हुआ। सायंकाल जिनेन्द्र भक्ति तथा रात्रि में पण्डित संजीवकुमारजी गोधा के सारगर्भित प्रवचन के उपरान्त इन्द्रसभा का आयोजन किया गया।

विधान के समस्त कार्य ब्र.जतीशचन्दजी शास्त्री के निर्देशन में पण्डित सुनीलजी धवल भोपाल, पं.अमितजी शास्त्री लुकवासा एवं पं.निखिलजी शास्त्री कोतमा ने कराये। **ह्न राजेन्द्र चौधरी**

वेदी शिलान्यास सम्पन्न

शिवपुरी (म.प्र.) : यहाँ छत्री रोड स्थित निर्माणाधीन श्री शांतिनाथ जैन मंदिर में सकल दि. जैन समाज की ओर से 6 दिसम्बर, 06 को हर्षोल्लास पूर्वक वेदी शिलान्यास का आयोजन हुआ।

शिवपुरी स्थित सभी जैन मंदिरों के अध्यक्ष एवं 1000-1200 लोगों की उपस्थिति में **पण्डित संजीवकुमारजी गोधा जयपुर** के प्रासंगिक प्रवचन ने उपस्थित जन समुदाय को मंत्र-मुग्ध कर दिया। प्रवचनोपरान्त आपही के करकमलों से **पण्डित लालजीरामजी विदिशा** के प्रतिष्ठाचार्यत्व में शुद्ध तेरापंथ आम्नायानुसार वेदी शिलान्यास की मांगलिक विधी सम्पन्न की गई।

कार्यक्रम का शुभारंभ श्री सुरेशचन्दजी जैन के घर से निकाली गई कलश शोभायात्रा से हुआ। ध्वजारोहण श्री विमलजी पत्तेवालों ने किया। प्रात: एवं रात्रि में श्री दिग. जैन छत्री मंदिर एवं श्री महावीर जिनालय में भी पण्डित लालजीरामजी एवं पण्डित संजीवकुमारजी गोधा के प्रवचन हुये।

7 दिसम्बर को पं. संजीवजी गोधा का एक प्रवचन पंचायती बड़ा मंदिर **कोलारस** में भी हुआ।

आयोजन श्री सुरेशचन्दजी जैन परिवार शिवपुरी के प्रयासों से सफल हुआ। **– अरुण जैन**

डॉ. भारिल्ल के आगामी कार्यक्रम

23 से 25 जनवरी, 2007	चन्देरी	छहढाला शिविर
25 से 31 जनवरी, 2007	बीना	पंचकल्याणक
02 से 06 फरवरी, 2007	मंगलायतन	पंचकल्याणक वार्षिकोत्सव
15 से 21 फरवरी, 2007	अलवर	पंचकल्याणक

मध्यप्रदेश के बुन्देलखण्ड की बीना नगरी में

श्री कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन स्वाध्याय मन्दिर ट्रस्ट के

तत्त्वावधान में

श्री नेमिनाथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव

(गुरुवार, २५ जनवरी से बुधवार, ३१ जनवरी २००७ तक)

आपको सूचित करते हुये अत्यन्त हर्ष हो रहा है कि मध्यप्रदेश के बुन्देलखण्ड की प्रसिद्ध नगरी बीना जि. सागर में श्री कुन्दकुन्द-कहान दिग. जैन स्वाध्याय मन्दिर ट्रस्ट के तत्त्वावधान में श्री १००८ महावीरस्वामी दिगम्बर जिनमन्दिर का निर्माण कार्य पूर्ण हो चुका है।

इसकी प्रतिष्ठा हेतु **श्री नेमिनाथ दिगम्बर जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव** का आयोजन **गुरुवार, दिनांक 25 जनवरी से बुधवार, 31 जनवरी 2007** तक अनेक भव्य आयोजनों के साथ सम्पन्न होने जा रहा है।

कार्यक्रम की सम्पूर्ण प्रतिष्ठाविधि बाल ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री, सनावद के प्रतिष्ठाचार्यत्व एवं ब्र. धन्यकुमारजी बेलोकर, पण्डित शांतिकुमारजी पाटील, पण्डित मधुकरजी जलगाँव के सह-प्रतिष्ठाचार्यत्व में सम्पन्न होगी।

इस अवसर पर जिनवाणी की अविरलधारा प्रवाहित करने हेतु अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त विद्वान विद्यावारिधि डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, डॉ. उत्तमचन्दजी सिवनी, पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली, ब्र. सुमतप्रकाशजी खनियांधाना आदि अनेक विशिष्ट विद्वान पधार रहे हैं।

जिनधर्म प्रभावना के सर्वोत्कृष्ट निमित्तभूत इस महायज्ञ में समस्त साधर्मियों को सपरिवार, इष्ट-मित्रों सहित पधारकर धर्मलाभ लेने हेतु हमारा वात्सल्यपूर्ण हार्दिक आमंत्रण है।

निवेदक

श्री नेमिनाथ दिग. जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव समिति

चैतन्यधाम परिसर, सागर गेट बीना, जि. सागर (म.प्र.)

सम्पर्क सूत्र – 07580-221701, 09893111424

चन्देरी में छहढ़ाला शिविर : 19 जनवरी से

चन्देरी (म.प्र.) : यहाँ पण्डित चुन्नीलालजी शास्त्री की पुण्यस्मृति में दिनांक 19 से 25 जनवरी 07 तक श्रीमती हीराबाई चुन्नीलाल जैन पारमार्थिक ट्रस्ट के सौजन्य से श्री अ.भा.दि.जैन विद्वत्परिषद् के तत्त्वावधान में छहढ़ाला शिक्षण शिविर का आयोजन किया जा रहा है।

शिविर में डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के पावन सानिध्य के अतिरिक्त स्वस्ति श्री भट्टारक चारूकीर्तिजी मूडबिद्री, पं. रतनचन्दजी भारिल्ल, पं. शान्तिकुमारजी पाटील, डॉ. राजेन्द्रजी बंसल, डॉ. सत्यप्रकाशजी जैन आदि विद्वान पधारेंगे। इस अवसर पर संगोष्ठी एवं भक्ति संध्या के विशेष आयोजन भी सम्पन्न होंगे।

ज्ञातव्य है कि इस अवसर पर अ.भा.दि.जैन विद्वत्परिषद् द्वारा प्रायोजित पं. गोपालदास बरैया पुरस्कार संस्था के मंत्री डॉ. राजेन्द्रकुमार बंसल, अमलाई वालों को दिया जायेगा। समारोह की अध्यक्षता विद्वत्परिषद् के अध्यक्ष डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल करेंगे।**ह्न अखिल बंसल**

साधना चैनल पर
डॉ. भारिल्ल के प्रवचन
प्रातः 6.35 से 6.40 के मध्य प्रारंभ

आजकल डॉ. भारिल्ल के प्रवचनों का समय प्रातः 6.40 बजे का ही है; फिर भी प्रवचन प्रायः 3-4 मिनिट पहले ही आरंभ हो जाते हैं। अनेक प्रयासों के बाद भी ठीक समय पर प्रवचन प्रारंभ करना संभव नहीं हो पा रहा है।

अतः प्रवचन सुननेवालों से निवेदन है कि साधना चैनल 6.35 पर ही चालू कर लें।